मोहम्मद रफ़ी: तुम मुझे यूं भुला न पाओगे

मोहम्मद रफ़ी साहब की जयंती 24 दिसम्बर पर विशेष

बहुमुखी संगीत प्रतिभा के धनी मोहम्मद रफ़ी का जन्म 24 दिसम्बर, 1924 को पंजाब के अमृतसर ज़िले के गांव मजीठा में हुआ। संगीत प्रेमियों के लिए यह गांव किसी तीर्थ से कम नहीं है। मोहम्मद रफ़ी के चाहने वाले दुनिया भर में हैं। भले ही मोहम्मद रफ़ी साहब हमारे बीच में नहीं हैं, लेकिन उनकी आवाज़ रहती दुनिया तक क़ायम रहेगी। साची प्रकाशन द्वारा प्रकाशित विनोद विप्लव की किताब मोहम्मद रफ़ी की सुर यात्रा मेरी आवाज़ सुनो मोहम्मद रफ़ी साहब के जीवन और उनके गीतों पर केंद्रित है। लेखक का कहना है कि मोहम्मद रफ़ी के विविध आयामी गायन एवं व्यक्तित्व को किसी पुस्तक में समेटना मुश्किल ही नहीं, बल्कि असंभव है, फिर भी अगर संगीत प्रेमियों को इस पुस्तक को पढ़कर मोहम्मद रफ़ी के बारे में जानने की प्यास थोड़ी-सी भी बुझ जाए तो मैं अपनी मेहनत सफल समझूंगा। इस लिहाज़ से यह एक बेहतरीन किताब कही जा सकती है।

मोहम्मद रफ़ी के पिता का नाम हाजी अली मोहम्मद और माता का नाम अल्लारखी था। उनके पिता ख़ानसामा थे। रफ़ी के बड़े भाई मोहम्मद दीन की हजामत की दुकान थी, जहां उनके बचपन का काफ़ी वक़्त गुज़रा। वह जब क़रीब सात साल के थे, तभी उनके बड़े भाई ने इकतारा बजाते और गीत गाते चल रहे एक फ़क़ीर के पीछे-पीछे उन्हें गाते देखा। यह बात जब उनके पिता तक पहुंची तो उन्हें काफ़ी डांट पड़ी। कहा जाता है कि उस फ़क़ीर ने रफ़ी को आशीर्वाद दिया था कि वह आगे चलकर खूब नाम कमाएगा। एक दिन दुकान पर आए कुछ लोगों ने रफ़ी को फ़क़ीर के गीत को गाते सुना। वह उस गीत को इस क़दर सधे हुए सुर में गा रहे थे कि वे लोग हैरान रह गए। रफ़ी के बड़े भाई ने उनकी प्रतिभा को पहचाना। 1935 में उनके पिता रोज़गार के सिलसिले में लाहौर आ गए। यहां उनके भाई ने उन्हें गायक उस्ताद उस्मान ख़ान अब्दुल वहीद ख़ान की शार्गिदी में सौंप दिया। बाद में रफ़ी ने पंडित जीवन लाल और उस्ताद बड़े ग़ुलाम अली खां जैसे शास्त्रीय संगीत के दिग्गजों से भी संगीत सीखा।

मोहम्मद रफ़ी उस वक़्त के मशहूर गायक और अभिनेता कुंदन लाल सहगल के दीवाने से और उनके जैसा ही बनना चाहते थे। वह छोटे-मोटे जलसों में सहगल के गीत गाते थे। क़रीब 15 साल की उम्र में उनकी मुलाक़ात सहगल से हुई। हुआ यूं कि एक दिन लाहौर के एक समारोह में सहगल गाने वाले थे। रफ़ी भी अपने भाई के साथ वहां पहुंच गए। संयोग से माइक ख़राब हो गया और लोगों ने शोर मचाना शुरू कर दिया। व्यवस्थापक परेशान थे कि लोगों को कैसे ख़ामोश कराया जाए। उसी वक़्त रफ़ी के बड़े भाई व्यवस्थापक के पास गए और उनसे अनुरोध किया कि माइक ठीक होने तक रफ़ी को गाने का मौक़ा दिया जाए। मजबूरन व्यवस्थापक मान गए। रफ़ी ने गाना शुरू किया, लोग शांत हो गए। इतने में सहगल भी वहां पहुंच गए। उन्होंने रफ़ी को आशीर्वाद देते हुए कहा कि इसमें कोई शक नहीं कि एक दिन तुम्हारी आवाज़ दूर-दूर तक फैलेगी। बाद में रफ़ी को संगीतकार फ़िरोज़ निज़ामी के मार्गदर्शन में लाहौर रेडियो में गाने का मौक़ा मिला। उन्हें कामयाबी मिली और वह लाहौर फ़िल्म उद्योग में अपनी जगह बनाने की कोशिश करने लगे। उस दौरान उनकी रिश्ते में बड़ी बहन लगने वाली बशीरन से उनकी शादी हो गई। उस वक़्त के मशहूर संगीतकार श्याम सुंदर और फ़िल्म निर्माता अभिनेता नासिर ख़ान से

रफ़ी की मुलाक़ात हुई। उन्होंने उनके गाने सुने और उन्हें बंबई आने का न्यौता दिया। रफ़ी के पिता संगीत को इस्लाम विरोधी मानते थे, इसलिए बड़ी मुश्किल से वह संगीत को पेशा बनाने पर राज़ी हुए। रफ़ी अपने भाई के साथ बंबई पहुंचे। अपने वादे के मुताबिक़ श्याम सुंदर ने रफ़ी को पंजाबी फ़िल्म गुलबलोच में ज़ीनत के साथ गाने का मौक़ा दिया। यह 1944 की बात है। इस तरह रफ़ी ने गुलबलोच के सोनियेनी, हीरिएनी तेरी याद ने बहुत सताया गीत के ज़रिये पार्श्वगायन के क्षेत्र में क़दम रखा। रफ़ी ने नौशाद साहब से भी मुलाक़ात की। नौशाद ने फ़िल्म शाहजहां के एक गीत में उन्हें सहगल के साथ गाने का मौक़ा दिया। रफ़ी को सिर्फ़ दो पंक्तियां गानी थीं-मेरे सपनों की रानी, रूही, रूही रूही। इसके बाद नौशाद ने 1946 में उनसे फ़िल्म अनमोल घड़ी का गीत तेरा खिलौना टूटा बालक, तेरा खिलौना टूटा रिकॉर्ड कराया। फिर 1947 में फ़िरोज़ निज़ामी ने रफ़ी को फ़िल्म जुगनूं का युगल गीत नूरजहां के साथ गाने का मौक़ा दिया। बोल थे- यहां बदला वफ़ा का बेवफ़ाई के सिवा क्या है। यह गीत बहुत लोकप्रिय हुआ। इसके बाद नौशाद ने रफ़ी से फ़िल्म मेला का एक गीत ये ज़िंदगी के मेले गवाया। इस फ़िल्म के बाक़ी गीत मुकेश से गवाये गए, लेकिन रफ़ी का गीत अमर हो गया। यह गीत हिंदी सिनेमा के बेहद लोकप्रिय गीतों में से एक है। इस बीच रफ़ी संगीतकारों की पहली जोड़ी हुस्नलाल-भगतराम के संपर्क में आए। इस जोड़ी ने अपनी शुरुआती फ़िल्मों प्यार की जीत, बड़ी बहन और मीना बाज़ार में रफ़ी की आवाज़ का भरपूर इस्तेमाल किया। इसके बाद तो नौशाद को भी फ़िल्म दिल्लगी में नायक की भूमिका निभा रहे श्याम कुमार के लिए रफ़ी की आवाज़ का ही इस्तेमाल करना पड़ा। इसके बाद फ़िल्म चांदनी रात में भी उन्होंने रफ़ी को मौक़ा दिया। बैजू बावरा संगीत इतिहास की सिरमौर फ़िल्म मानी जाती है। इस फ़िल्म ने रफ़ी को कामयाबी के आसमान तक पहुंचा दिया। इस फ़िल्म में प्रसिद्ध शास्त्रीय गायक उस्ताद अमीर खां साहब और डी वी पलुस्कर ने भी गीत गाये थे। फ़िल्म के पोस्टरों में भी इन्हीं गायकों के नाम प्रचारित किए गए, लेकिन जब फिल्म प्रदर्शित हुई तो मोहम्मद रफ़ी के गाये गीत तू गंगा की मौज और ओ दुनिया के रखवाले हर तरफ़ गूंजने लगे। रफ़ी ने अपने समकालीन गायकों तलत महमूद, मुकेश और सहगल के रहते अपने लिए जगह बनाई। रफ़ी के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने तक़रीबन 26 हज़ार गाने गाये, लेकिन उनके तक़रीबन पांच हज़ार गानों के प्रमाण मिलते हैं, जिनमें ग़ैर फ़िल्मी गीत भी शामिल हैं। देश विभाजन के बाद जब नूरजहां, फ़िरोज़ निज़ामी और निसार वाज्मी जैसी कई हस्तियां पाकिस्तान चली गईं, लेकिन वह हिंदुस्तान में ही रहे। इतना ही नहीं, उन्होंने सभी गायकों के मुक़ाबले सबसे ज़्यादा देशप्रेम के गीत गाये। रफ़ी ने जनवरी, 1948 में महात्मा गांधी की हत्या के एक माह बाद गांधी जी को श्रद्धांजलि देने के लिए हुस्नलाल भगतराम के संगीत निर्देशन में राजेंद्र कृष्ण रचित सुनो सुनो ऐ दुनिया वालों, बापू की ये अमर कहानी गीत गाया तो पंडित जवाहर लाल नेहरू की आंखों में आंसू आ गए थे। भारत-पाक युद्ध के वक़्त भी रफ़ी ने जोशीले गीत गाये। यह सब पाकिस्तानी सरकार को पसंद नहीं था। शायद इसलिए दुनिया भर में अपने कार्यक्रम करने वाले रफ़ी पाकिस्तान में शो पेश नहीं कर पाए। रफ़ी किसी भी तरह के गीत गाने की योग्यता रखते थे। संगीतकार जानते थे कि आवाज़ को तीसरे सप्तक तक उठाने का काम केवल रफ़ी ही कर सकते थे। मोहम्मद रफ़ी ने संगीत के उस शिखर को हासिल किया, जहां तक कोई दूसरा गायक नहीं पहुंच पाया। उनकी आवाज़ के आयामों की कोई सीमा नहीं थी। मद्धिम अष्टम स्वर वाले गीत हों या बुलंद आवाज़ वाले याहू शैली के गीत, वह हर तरह के गीत गाने में माहिर थे। उन्होंने भजन, ग़ज़ल, क़व्वाली, दशभक्ति गीत, दर्दभरे तराने, जोशीले गीत, हर उम्र, हर वर्ग और हर रुचि के लोगों को अपनी आवाज़ के जादू में बांधा। उनकी असीमित गायन क्षमता का आलम यह था कि उन्होंने रागिनी, बाग़ी, शहज़ादा और शरारत जैसी

फ़िल्मों में अभिनेता-गायक किशोर कुमार पर फ़िल्माये गीत गाये।

वह 1955 से 1965 के दौरान अपने करियर के शिखर पर थे। यह वह व़क्त था, जिसे हिंदी फ़िल्म संगीत का स्वर्ण युग कहा जा सकता है। उनकी आवाज़ के जादू को शब्दों में बयां करना नामुमकिन है। उनकी आवाज़ में सुरों को महसूस किया जा सकता है। उन्होंने अपने 35 साल के फ़िल्म संगीत के करियर में नौशाद, सचिन देव बर्मन, सी रामचंद्र, रोशन, शंकर-जयकिशन, मदन मोहन, ओ पी नैयर, चित्रगुप्त, कल्याणजी-आनंदजी, लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल, सलिल चौधरी, रवींद्र जैन, इक़बाल क़ुरैशी, हुस्नलाल, श्याम सुंदर, फ़िरोज़ निज़ामी, हंसलाल, भगतराम, आदि नारायण राव, हंसराज बहल, ग़ुलाम हैदर, बाबुल, जी एस कोहली, वसंत देसाई, एस एन त्रिपाठी, सज्जाद हुसैन, सरदार मलिक, पंडित रविशंकर, उस्ताद अल्ला रखा, ए आर क़ुरैशी, लच्छीराम, दत्ताराम, एन दत्ता, सी अर्जुन, रामलाल, सपन जगमोहन, श्याम जी-घनश्यामजी, गणेश, सोनिक-ओमी, शंभू सेन, पांडुरंग दीक्षित, वनराज भाटिया, जुगलकिशोर-तलक, उषा खन्ना, बप्पी लाहिड़ी, राम-लक्ष्मण, रवि, राहुल देव बर्मन और अनु मलिक जैसे संगीतकारों के साथ मिलकर संगीत का जादू बिखेरा।

रफ़ी साहब ने 31 जुलाई, 1980 को आख़िरी सांस ली। उन्हें दिल का दौरा पड़ा था। जिस रोज़ उन्हें जुहू के क़ब्रिस्तान में दफ़नाया गया, उस दिन बारिश भी बहुत हो रही थी। उनके चाहने वालों ने उन्हें नम आंखों से विदाई दी। लग रहा था मानो रफ़ी साहब कह रहे हों-

हां, तुम मुझे यूं भुला न पाओगे

जब कभी भी सुनोगे गीते मेरे

संग-संग तुम भी गुनगुनाओगे…

(लेखिका स्टार न्यूज़ एजेंसी में संपादक हैं)

ईमेल : editor.starnewsagency@gmail.com